शैक्षिक विचार विमर्श में अक्सर यह मान्यता रहती है कि शिक्षा को राजनीति से परे रखा जाना चाहिए। डियरडेन राजनीति की इस भोली समझ को प्रश्नित करते हुए इस लेख में तर्क करते हैं कि कोई भी शैक्षिक निर्णय अ-राजनैतिक नहीं होता। शिक्षा में संसाधनों के बंटवारे से लेकर पाठ्यचर्या के निर्धारण तक में राजनीति की दखल होती है; क्योंकि ये निर्णय हमारे भावी समाज के संकल्पना से जुड़े होते हैं।

आर. एफ. डियरडेन

शिक्षा और राजनीति

क्या शिक्षा को राजनीति से बाहर रखा जा सकता है ? यह कोई नया प्रश्न नहीं है हालांकि इसे बहुत बार उठाया जाता है, कितनी बार यह जानना कठिन हो गया है; क्योंकि इसे अलग-अलग प्रकार से उठाया जाने लगा है। हम से भी इसकी बजाय यह पूछा जा सकता है कि पाठ्यचर्या सरकार के नियंत्रण में होनी चाहिए या कि इसे राजनैतिक रूप से तटस्थ रखा जा सकता है। कभी-कभी जवाब में जो उत्तर आते हैं वे क्या पढ़ाया जाए के बारे में सरकारी निर्देशों की वांछनीयता के पक्ष या विपक्ष में विस्तृत विचार होते हैं। ऐसी दलीलें एक खास समाज की पृष्ठभूमि के संदर्भ में तब दी जाती हैं जब वह विशिष्ट ऐतिहासिक मोड़ पर होता है- लेकिन दूसरे जवाब अधिक इकतरफा होते हैं। जो अधिक इकतरफा जवाब होते हैं हमें इस बात के लिए रजामन्द करने के लिए नियंत्रित करते हैं कि पाठ्यचर्या के बारे में राज्य तटस्थ *नहीं रह सकता* अथवा/और सरल ढंग से कहें तो, शिक्षा को राजनीति से बाहर *नहीं रखा जा सकता,* चाहे इस मामले में कोई कुछ भी वांछनीय माने या सोचे। ये 'नहीं हो सकता' और 'अवश्य होना चाहिए' वाले उत्तर, विशेष रूप से, खास बहसों को होने के पहले ही समाप्त कर देते हैं और पक्षधर समूहों को जबरन एक ही कोने में धकेलने का प्रयास करते हैं।

आर. एफ. डियरडेन

'द फिलॉसॉफी ऑफ प्राइमरी एज्युकेशन', 'एज्युकेशन एण्ड रीजन', 'एज्युकेशन एण्ड डवलपमेंट ऑफ रीजन', 'क्रिटीक ऑफ करंट एज्युकेशनल एम्स', 'प्रोब्लम्स ऑफ प्राइमरी एज्युकेशन', 'रीजन, थियरी एण्ड प्रैक्टिस इन एज्युकेशन'; आदि पुस्तकों के लेखक एवं इंग्लैण्ड के जाने-माने शिक्षा दार्शनिक डियरडेन इंस्टीट्यूट ऑफ एज्युकेशन, लंदन में प्रोफेसर के पद पर कार्यरत रहे हैं।

क्या इस तरह के दबाव डालने के प्रयास सफल हो सकते हैं ? क्या ऐसा है कि हम पाठ्यचर्या को सिर्फ राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में ही देख सकते हैं ? सबूत के तौर पर रिचर्ड नोर्मन उन्हीं लोगों में से हैं जिनका जवाब 'हां' में होगा हालांकि उनके लेख से यह स्पष्ट नहीं होता कि वे नैतिकता और राजनीति के बीच अन्तर को पहचानते हैं या नहीं। वे लिखते हैं : ''क्या पढ़ाया जाए और इसे कैसे पढ़ाया जाए से संबंधित प्रश्नों का उत्तर केवल राजनैतिक या अन्य प्ररिप्रेक्ष्य के संदर्भ में ही दिया जा सकता है [1]। इसलिए ऐसे सवालों का जवाब *केवल हो सकता है*... इत्यादि दिया जा सकता है। इस आवश्यकता की कुछ पूर्ति जॉन व्हाइट करते हैं, वे लिखते हैं : ''पाठ्यचर्या से संबंधित निर्णय अनिवार्य रूप से अच्छे समाज की प्रकृति के बारे में *राजनैतिक* (तिरछा लिखा उन्हीं का है) विचारों से जुड़े होते हैं [2]। इसके समर्थन में तर्क यह है कि पाठ्यचर्या आधारित सीखना आगे बनने वाले समाज की किस्म को प्रभावित करता है; इस सीखने में इसलिए अच्छे समाज का विचार निहित होता है और चूंकि यह विचार राजनैतिक विचार है, इसलिए इसका निर्णय भी राजनैतिक ही होना चाहिए। अतः इसे पेशेवर शिक्षाविदों पर नहीं छोड़ा जा सकता। इसलिए, पाठ्यचर्या संबंधी निर्णय राजनैतिक होते हैं। *इससे बचा नहीं जा सकता।*

क्या यह सब परियों की कहानी जैसा नहीं है या कि वास्तव में हमें जो अवश्यम्भावी है, उसके आगे घुटने नहीं टेक देने चाहिएं और इस तरह वांछनीयता या अवांछनीयता की अधिक विशिष्ट बहस से मुक्ति पा लेनी चाहिए ? क्योंकि यदि पाठ्यचर्या संबंधी निर्णय केवल राजनैतिक परिप्रेक्ष्य से ही किए जा सकते हैं या यदि वे अनिवार्य रूप से राजनैतिक ही हैं तब वे जो अधिक विशिष्ट बहसें होंगी, वे ऐसी ही होंगी जिनमें कुवारों के विवाह करने की वांछनीयता या अवांछनीयता पर बहस होगी या दो और दो पांच होते हैं, इस पर या बच्चे अंक गणित सीखने के पहले बीज गणित सीखें इस पर। आरंभ में जिस प्रश्न से हमारा सरोकार था वह है : क्या शिक्षा को राजनीति से बाहर रखा जा सकता है ?

शायद इस प्रश्न पर पहली प्रतिक्रिया में कहा जाएगा कि यह सब इस पर निर्भर करता है कि आप 'राजनैतिक' से क्या अर्थ लेते हैं, और निश्चित रूप से यह दार्शनिक तर्क की अति-सामान्य दृष्टि है कि इसे कम से कम शब्दावली की परिभाषा से तो शुरू करना ही चाहिए। हालांकि, यदि इसको एकदम सामान्य रूप में लिया जाए तो ऐसा विचार बहुत-सी जानी-पहचानी आपत्तियों को आमंत्रित करता है परिभाषाओं की यह मांग पीछे की ओर ले जाती है क्योंकि जिन शब्दों में परिभाषा दी जाती है वे स्वयं अपरिभाषित होते हैं। फिर, कुछ शब्द ऐसे भी होते हैं जिन्हें दूसरे शब्दों में किसी भी प्रकार से स्पष्टतः परिभाषित नहीं किया जा सकता जैसे कि रंग या ध्वनियां; और ऐसा तो हो नहीं सकता कि पहले हमें एक परिभाषा दे दी जाए ताकि जो कुछ हम कहना चाहते हैं उसका अर्थ स्पष्ट हो क्योंकि जब तक हमें अर्थ का कम से कम कोई आभास नहीं होगा, तब तक यह जानने का हमारे पास कोई भी तरीका नहीं होगा कि प्रस्तावित परिभाषा सही है या नहीं [3]। यदि हमें आरंभ में ही परिभाषाएं देने के लिए दबाव डाला जाता है तो गंभीर आशंकाओं का होना वाजिब है लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि इसका कभी कुछ भी लाभ नहीं होता और 'राजनैतिक' के मामले में कुछ आरंभिक स्पष्टीकरण बहुत वांछनीय होते हैं। जैसा कि इस प्रश्न के साथ भी हैं 'क्या नैतिकता सापेक्ष होती है ?' ऐसा ही इसके साथ भी है, 'क्या शिक्षा को राजनीति से बाहर रखा जा सकता है ?' तब ज्यादा निरर्थकता और तर्क एक-दूसरे को काटते हुए चलते हैं, जब हम खास शब्द के न्यूनतम स्पष्टीकरण का भी प्रयास नहीं करते हैं जैसा कि इस मामले में 'सापेक्ष' नहीं बल्कि 'राजनैतिक' है।

निस्संदेह राजनीति राज्य की गतिविधियों में ही नहीं पाई जाती। सभी संस्थानों का राजनैतिक पहलू भी होता है; उदाहरण के लिए, स्कूल का और यहां तक कि परिवार का भी। स्कूल में कोई भी व्यक्ति जिसका संबंध अधिकारों के उपयोग करने से होता है या स्कूल की व्यवस्था में बदलाव करने या स्कूल के संसाधनों को आवंटित करने या शक्ति की श्रेणियों को प्रभावित करने की ताकत होती है, वह राजनीति के किसी न किसी रूप से संबद्ध होता है। यहां इतना ही कहना काफी होगा कि राजनीति इन मामलों में निर्णायक भूमिका से बद्ध होती है जैसे कि संसाधनों का आवंटन, प्रतिस्पर्धी हितों का नियमन, निश्चित संसाधनों की स्थापना या उनमें सुधार, इन संदर्भों में प्राथमिकताएं निश्चित करना और गतिविधियों का समाहार करना। इसमें एक सिद्धांत निहित होता है और उसके आधार पर एक विशिष्ट नैतिक या सामाजिक दार्शनिक दृष्टि होती है जो मूल्यों से संबंधित मामलों को निर्देशित करती है। इस प्रकार यह न्याय, शक्ति, स्वतंत्रता, खुशी इत्यादि के बारे में एक विशिष्ट सामाजिक विश्लेषण करते हुए एक परिप्रेक्ष्य का निर्माण करती है, जिसमें से सिद्धांत और नीतियां निकलती हैं जो उन कुछ लोगों के कार्यों का मार्गदर्शन करती हैं जिनके पास अधिकार या शक्ति होती है। राजनीति केवल राज्य के स्तर पर ही नहीं होती यह उस स्तर पर भी होती है जिससे अभी हमारा वास्ता है। इसलिए, एक बार फिर दिमाग में स्पष्टीकरण के इस प्रयास के साथ (यद्यपि यह मुश्किल से ही परिभाषा कही जाएगी); क्या शिक्षा को राजनीति से बाहर रखा जा सकता है ?

राज्य के अन्तर्गत किसी भी गतिविधि के बारे में हम कह सकते हैं कि या तो इसकी इजाजत दी गई है (शायद दबाव में ही हो) या

इजाजत नहीं दी गई है और इस सतही अर्थ में राज्य इसके बारे में तटस्थ नहीं रह सकता। यह वैसा ही है जैसा कि नौकरी ढूंढ़ना या कुत्ते को टहलाने के लिए ले जाना। विशेष रूप से बच्चों की शिक्षा के बारे में राज्य आमतौर पर चाहते हैं कि बच्चे शिक्षित हों, चाहे तो ऐसे संस्थानों में जो राज्य द्वारा इसीलिए बनाए गए हैं या फिर निजी संस्थानों में। मुझे इसमें संदेह है कि वास्तव में राज्य इससे बच सकता है कि उसकी यह आवश्यकता होनी चाहिए, किन्तु अनेक कारणों से यह अत्यन्त वांछनीय है और इसे प्रायः मानवाधिकारों की रुचियों में शामिल किया जाता है। मैं बच्चे की आजादी के घनघोर अतिक्रमण की ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं, जो उसकी आरंभिक आर्थिक स्वतंत्रता का निषेध करती है और उस शैक्षणिक सत्ता के मातहत अवस्थित करती है इसलिए नहीं कि उसकी प्रमाणिकता पर चर्चा करनी है बल्कि सिर्फ एक प्रकार से यह दर्शाने के लिए कि राज्य शिक्षा में पहले ही किस तरह लिप्त है। कोई भी जो यह प्रश्न उठाता है कि क्या शिक्षा को राजनीति से बाहर रखा जा सकता है, वह यह मानता है कि अब तक राजनीति ऐसे लिप्त नहीं रही है, तो वह बहुत बड़ी गलती पर है।

वह एक और प्रकार से भी बहुत बड़ी गलती पर है। यदि वह शिक्षा पर ध्यान इस रूप में केन्द्रित करता है कि यह ज्ञान और समझ का हस्तांतरण है जो कि वास्तव में इसकी आत्मा है, तब यह नजर से ओझल रहेगा कि ऐसे हस्तांतरण में एक बहुत ही, आरंभिक चरण से परे, ठोस आधार की जरूरत होती है। इसे भवन, यंत्रादि, पुस्तकों, सामग्रियों और शिक्षकों की जरूरत होती है जिन्हें किसी प्रकार से पैसे से प्राप्त किया जाता है। इस प्रकार के संसाधन हमेशा ही तंग हाल में होते हैं। इस अर्थ में कि इसके लिए कुल मिलाकर जो धन उपलब्ध होता है वह सदैव ही सीमित मात्रा में होता। राज्य के अपने संस्थानों को पैसा उपलब्ध कराने के सामान्य उदाहरण पर विचार करें तो, शिक्षा के लिए संसाधनों के आवंटन को दूसरी अन्य वांछनीय सेवाओं हेतु आवंटनों से प्रतिस्पर्धा करनी पड़ती है जैसे कि रक्षा, कानूनी व्यवस्था, सार्वजनिक स्वास्थ्य और सरकार स्वयं। इस प्रकार राज्य की शैक्षिक गतिविधियों के लिए ठोस आधार एक स्तर पर अनिवार्य रूप से राजनैतिक होता है। यदि वह प्रावधान एक ब्लॉक के लिए भी होता है तो उसका विस्तृत विभाजन या अधिक विशिष्ट उद्देश्यों हेतु आवंटन दूसरे लोगों पर छोड़ दिया जाता है। अतः एक बार फिर हम कह सकते हैं कि राजनीति का शिक्षा पर प्रभाव कोई नया या साहसी क्रांतिकारी प्रस्ताव नहीं है बल्कि पहले ही प्रतिदिन की बड़ी वास्तविकता बन चुका है।

और अधिक कहने के लिए क्या है ? हम देख चुके हैं कि यह वास्तविकता है कि वैयक्तिक स्वतंत्रता का बड़े पैमाने पर राजनैतिक अतिक्रमण होता है और संसाधनों के आवंटन पर वैश्विक राजनैतिक नियंत्रण है; लेकिन वे लोग भी हैं जो दलील देंगे कि इससे आगे राजनीति को नहीं जाना चाहिए बल्कि वास्तव में नहीं जा सकती [4]। इस शानदार दावे को मजबूत करने के लिए निम्न तर्क दिया जाता है। शिक्षा ज्ञान और समझ से संबंधित है (जो वास्तव में है भी)। ज्ञान और समझ विभिन्न रूप लेती है जिसमें से हरेक के सत्य के मानदण्ड और प्रवीणता के मानक बनते हैं जो स्वायत्त होते हैं। ऐसे मानदण्ड और मानक विषयवस्तु की प्रकृति से प्राप्त होते हैं न कि किसी राजनैतिक सत्ता से। इस प्रकार विज्ञान सही तरीके से सत्य के मानदण्ड से संचालित होता है, जो प्रायोगिक रूप से नियंत्रित अवलोकन और सरलता तथा व्याख्या में निहित शक्ति और प्रवीणता के मानकों को संदर्भित करता है। वैज्ञानिक चिन्तन इस प्रकार स्वायत्त मानदण्डों और मानकों द्वारा संचालित होता है और अपनी सत्यनिष्ठ प्रकृति से राजनैतिक जरूरतों की घुसपैठ से विकृत किया जा सकता है, प्रायः दिया जाने वाला चुनौतिपूर्ण उदाहरण है लीसेंका का जीव-विज्ञान का वर्णन।

बिलकुल ऐसी ही बात कला के बारे में कही जा सकती है। यदि कलात्मक गतिविधि राजनैतिक जरूरतों के मुताबिक संचालित होती है, तब कोई भी राजनीति द्वारा अनुमोदित अधकचरी कृति जो किसी ऐरे-गैरे द्वारा बनाई गई है और एकदम भौंडी है, आपको मिल जाएगी जिसे किसी अन्य द्वारा बनाई गई अत्यन्त श्रेष्ठ कृति से सौन्दर्यभाव में बेहतर समझा जाएगा, इन आधारों पर कि पहले वाली कृति को वर्ग विशेष का समर्थन प्राप्त है जबकि, बाद वाली 'बुर्जुआ' है। स्वयं राजनैतिक शिक्षा को भी, यदि इसे शिक्षा होना है तो, न कि मतारोपण, विशिष्ट राजनैतिक सिद्धांतों और व्यवहारों से संबंधित निश्चित स्वायत्तता अनिवार्य है। सही स्वायत्त मानदण्डों के अनुसार सत्य को स्थापित करने के लिए उसे अनिवार्य रूप से स्वतंत्रता की जरूरत होगी। यही बात सूक्ति के रूप में रखने के लिए हम कह सकते हैं कि सत्य इच्छा से स्वतंत्र होता है। यह इस पर निर्भर करता है कि वस्तुस्थिति क्या है और इस पर नहीं कि राजनैतिक सत्ता उसे कैसा देखना चाहती है। इसलिए यदि हम वास्तव में शिक्षा से सरोकार रखते हैं तो हमें स्वायत्त मानदण्डों और मानकों का सम्मान करना पड़ेगा और इसलिए एक घेरा मौजूद होता है जिसे राजनीति तोड़कर बाहर नहीं जा सकती। इस अर्थ में शिक्षा को राजनीति से बाहर रखना होगा।

वास्तव में इस अर्थ में इसे लेना होगा, लेकिन ऐसा कहना इस उक्ति से बहुत दूर है कि राजनीति वैयक्तिक स्वतंत्रता और भौतिक सामग्री की उपलब्धता से परे नहीं जा सकती जैसा कि हम देख चुके हैं। स्वायत्त मानदण्डों और मानकों के सम्मान की रक्षा करते हुए जिनका

वर्णन किया गया है, राजनैतिक सत्ता पाठ्यचर्या में कुछ विषयों को शामिल करने की जरूरत महसूस कर सकती है और कुछ को इससे बाहर कर सकती है। या उन विषयों के अन्तर्गत कुछ प्रसंगों को शामिल कर सकती अथवा पाठ्यचर्या से बाहर रख सकती है। तथाकथित 'दोहरी' व्यवस्था में विश्वविद्यालयी और बहु-तकनीकी शिक्षा के बीच इरादतन अन्तर पर विचार करें (मेरा आशय उन दोनों के बीच वास्तविक अन्तर से या अन्तर होने से नहीं है)। यह आशय, और यह आशय राजनैतिक आशय है, खासतौर से ये बहु-तकनीकी विद्यालय उद्योगों और प्रशासन के लिए दक्ष श्रमिकों की भूमिका के लिए तैयार किए जाएंगे जबकि विश्वविद्यालयी शिक्षा की सामान्य प्रकृति को कायम रखा जाएगा। फिर एक बार इस निर्णय पर विचार करें जिसमें गणित, विज्ञान और आधुनिक भाषाओं को अधिक महत्त्व दिया जाए, शायद यह सामाजिक अध्ययनों, शास्त्रीय विधाओं, कला या इतिहास की कीमत पर हो। ऐसा राजनैतिक निर्णय संभव है, जो तिस पर भी गणित, इतिहास आदि की स्वायत्तता बरकरार रखे। साझा बाजार में हमारे प्रवेश के कारण सरकार की इच्छा हो सकती है कि आधुनिक भाषाएं सिखाने को अधिक स्थान दिया जाए और यह सब सत्य को इच्छा से स्वतंत्र मानने वाले सिद्धांत का उल्लंघन किए बिना हो। इसलिए यह दलील कि राजनीति वैयक्तिक स्वतंत्रता और सामग्रियों की उपलब्धता के मामलों के परे शिक्षा का अतिक्रमण नहीं कर सकती, सही नहीं ठहरती। राजनैतिक सत्ता यानी कि सरकार ज्ञान और समझ के विभिन्न प्रकारों की स्वायत्तता से अच्छा तादात्म्य बनाए रखते हुए बहुत आगे तक जा सकती है। स्पैनिश के शिक्षक को नियुक्त किया जा सकता है, बर्खास्त किया जा सकता है या उसके काम के घंटों में परिवर्तन किया जा सकता है; बिना उसे यह आदेशित किए कि अच्छी स्पैनिश क्या है, स्पैनिश साहित्य में सर्वोच्च क्या है या कि स्पैनिश कैसे पढ़ाई जानी चाहिए। यहां तक कि यदि शिक्षा की अवधारणा से कुछ पाबंदिया लेकर उन्हें लगाने का प्रयास भी करना पड़े, तब भी विभिन्न प्रकार के बहिष्करण, समावेशन और महत्त्व देने की काफी गुंजाइश बची रहेगी।

पाठ्यचर्या आधारित सीखना आगे बनने वाले समाज की किस्म को प्रभावित करता है; इस सीखने में इसलिए अच्छे समाज का विचार निहित होता है और चूंकि यह विचार राजनैतिक विचार है, इसलिए इसका निर्णय भी राजनैतिक ही होना चाहिए।

यह मानते हुए कि राजनैतिक कार्यसूची इस तरह अधिक व्यापक हो सकती है, क्या इसे ऐसा होने दें ? क्या और भी दलीलें हैं जो यह दिखा सकें कि पाठ्यचर्या राजनैतिक रूप से तटस्थ हो सकती है और इसलिए इसे राजनैतिक नियंत्रण में लाया जाना चाहिए ? इस पर मुश्किल से ही सन्देह किया जा सकता है। पेशेवर शिक्षाविदों द्वारा पाठ्यचर्या से संबंधित लिए गए अनेक निर्णय इरादतन राजनैतिक रूप से तटस्थ होते हैं लेकिन प्रश्न है कि क्या लिए गए निर्णय अपने प्रभावों में भी तटस्थ हो सकते हैं। संभवतः यह तर्क दिया जा सकता है कि हमारा जो भी इरादा हो, हमारा कोई भी कार्य कभी भी अपने प्रभाव की दृष्टि से राजनैतिक रूप से तटस्थ नहीं होता है, सबसे पहली और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि पेशेवर शिक्षाविदों का पाठ्यचर्या से संबंधित कोई भी निर्णय अपने प्रभावों में तटस्थ नहीं हो सकता- लेकिन यह तुरन्त स्पष्ट नहीं होगा कि ऐसा ही क्यों होना चाहिए।

पहले एक प्रधानाध्यापक के मामले पर विचार करें जो एनयूपीई संभालकर्ताओं (केयर टेकर) की हड़ताल से रूबरू है। हड़ताल के मामले में प्रधानाध्यापक राजनैतिक रूप से तटस्थ रहने की ख्वाहिश रख सकता है (खासतौर से ऐसी स्थिति में जब संभालकर्ताओं की साख को बहुत श्रेय दिया जाता है)। लेकिन होता यह है कि संभालकर्ता स्कूल के गेट का ताला खोलने से मना कर देता है जिसके कारण शिक्षार्थी स्कूल के अन्दर नहीं आ सकते। अब या तो प्रधानाध्यापक दरवाजा खोलता है या नहीं खोलता। यदि वह खोलता है तो वह एक प्रकार से हड़ताल के असर को कम करने का काम करता है; यदि नहीं खोलता है तो वह हड़ताल के असर को बढ़ाता है। वह तटस्थ नहीं रह सकता। आगे एक अध्यापक के पाठ्यचर्या संबंधी निर्णय पर विचार करते हैं कि क्या वह जान-बूझकर अपनी कक्षा में नस्लवादी अभिवृत्ति को कम करने के उद्देश्य से काम करता है। नस्लवाद राजनैतिक मामला है और या तो वह इस पर कोई निर्णय लेता है या नहीं लेता है। यदि लेता है तो एक या अन्य प्रकार की राजनैतिक प्रतिबद्धता जाहिर होती है; यदि नहीं लेता है तब वह उन सभी सामाजिक ताकतों को बिना विरोध के खुला छोड़

देता है जिनका शक्तिशाली प्रभाव उसके शिक्षार्थियों पर इस मुद्दे से संबंधित अभिवृत्तियों के निर्माण में पड़ता है और फिर वह तटस्थ नहीं रह सकता। एक बार फिर एक व्याख्याता पर गौर करें जिसे अपना व्याख्यान देने के लिए मना कर दिया जाता है क्योंकि शिक्षार्थियों की एक राजनैतिक सभा होने वाली है। वह व्याख्यान देने के कार्य को निरस्त करता है या नहीं करता है, उसके निर्णय का कुछ राजनैतिक महत्त्व है : या तो यह सभा में शिक्षार्थियों की उपस्थिति को कम कर सकता है या बढ़ा सकता है।

इन उदाहरणों को अब इस प्रकार सामान्यीकृत किया जा सकता है। पाठ्यचर्या संबंधी हर निर्णय अन्ततः शिक्षित होने के पैटर्न पर प्रभाव डालता है जिसके साथ वे स्कूली शिक्षा पूरी करने पर बाहर आते हैं। परिणामतः सूचनाएं उनके पास कम उपलब्ध हैं या बेहतर रूप से उपलब्ध हैं, कम या अधिक दक्ष हैं, संवेदनशील हैं या असंवेदनशील हैं, कुछ मायनों में सार-संभाल करने वाले हैं या लापरवाह हैं। ये सब चीजें एक वांछनीय समाज की राजनैतिक दृष्टि के साथ मेल खा भी सकता है और नहीं भी, रुकावट पैदा कर सकती है या सहज भी बना सकती है। शिक्षित होने के पैटर्न पर पड़ने वाले इसके प्रभाव के कारण और राजनैतिक दृष्टि में उसकी प्रासंगिकता की वजह से, पाठ्यचर्या संबंधी निर्णय अतएव अनिवार्य रूप से अपने महत्त्व के कारण राजनैतिक होते हैं और इसलिए इन्हें राज्य के राजनैतिक नियंत्रण में लाया जाना चाहिए। इस प्रकार यह तर्क और आगे तक जा सकता है।

इस तर्क का हम क्या करें ? क्या राजनैतिक नियंत्रण की वांछनीयता या अवांछनीयता की सब बातें एक अपरिहार्य आवश्यकता के द्वारा उजागर करके उसे सफलतापूर्वक स्थानान्तरित कर दिया गया है ? तार्किकता की समानता के आधार पर पहले हम इस प्रकार के तर्क की संभावित व्यापकता और शक्ति को दर्ज करते हैं। आधुनिक राज्य में स्कूल एक औपचारिक शैक्षिक ऐजेंसी हो सकती है लेकिन अनौपचारिक एजेंसियों की बहुलता भी है। उदाहरण के लिए, परिवार, कारखाना, दफ्तर, संचार माध्यम, वास्तव में जिंदगी का प्रत्येक पहलू शैक्षिक या कुशैक्षिक प्रभाव में है। ये सब एजेंसियां हमारे ज्ञान, समझ, संवेदनशीलता, दक्षताओं और अन्य चीजों को जिनकी हमें जरूरत होती है; प्रभावित करती हैं। दर्शन की आदर्शवादी परंपरा जिसका उदाहरण ऐसे लोगों ने प्रस्तुत किया है जैसे हेगल, ब्रेडले, बोसान्क्वेट, ग्रीन और वस्तुतः डिवी ने इन तथ्यों का सर्वाधिक सुस्पष्ट बोध करवाया है [5]। तथ्यों को स्वीकार करते हुए तर्क की समानता के आधार पर इस तर्क का क्या यह अर्थ होगा कि जिंदगी का हर पहलू राजनैतिक नियंत्रण में लाया जाए ? शायद ऐसा है, लेकिन एक क्षण के लिए इस प्रकार के तर्क के निहितार्थों के विस्तार सिर्फ दर्ज करके हम संतुष्ट हो जाते हैं और दूसरे बिन्दु पर आते हैं।

स्कूल में कोई भी व्यक्ति जिसका संबंध अधिकारों के उपयोग करने से होता है या स्कूल की व्यवस्था में बदलाव करने या स्कूल के संसाधनों को आवंटित करने या शक्ति की श्रेणियों को प्रभावित करने की ताकत होती है, वह राजनीति के किसी न किसी रूप से संबद्ध होता है।

यदि तर्कों को स्वीकार कर भी लिया जाए, तब भी एक शैक्षिक कार्यक्रम को विरोधी राजनैतिक सिद्धांतों के बीच में तटस्थ रहना संभव होगा। ऐसा हो सकेगा इसलिए नहीं कि कार्यक्रम की विषयवस्तु राजनैतिक दृष्टि से अप्रासंगिक थी बल्कि इसलिए कि यह सभी प्रतिस्पर्धी राजनैतिक सिद्धांतों के लिए समान रूप से प्रासंगिक थी। जैसा कि अन्य लोगों ने बताया है कि किसी सत्ताधारी राजनैतिक पार्टी का पाठ्यचर्या पर राजनैतिक नियंत्रण होने का अर्थ अनिवार्यतः यह नहीं है कि पाठ्यचर्या तब राजनैतिक फुटबाल बन जाएगी। यदि राजनीति द्वारा थोपी गई पाठ्यचर्या 'बुनियादी' विषय जैसे गणित, विज्ञान, शारीरिक शिक्षा और नैतिकता को जरूरी मानता है तो यह समान रूप से स्वीकार्य हो सकता है बशर्ते सब सरोकार रखने वाली पार्टियों द्वारा कुछ और खास चीजों को समाहित करने की छूट दी जाए। कुछ चीजों पर सहमति संभव होती है और विविध उद्देश्यों तक पहुंचने के लिए समान साधनों पर और सहमति बन जाती है। कम्यून में हिसाब-किताब रखने के लिए गणित उतना ही उपयोगी है जितना लाभ-हानि निकालने के लिए जबकि स्वेच्छा से किए गए दया-भाव के कार्यों के प्रति कृतज्ञता सभी के द्वारा अच्छी मानी जाती है। इस प्रकार एक अंश तक राजनैतिक पार्टी की तटस्थता संभव होती है जिसमें पाठ्यचर्या का केन्द्रीय अंश सभी के द्वारा इच्छित होता है। यह सही है कि उसे क्रियान्वित करना उसी तरह का होगा जैसे कि शिक्षकों

से सांस लेने के लिए कहा जाए या सर्दी के मौसम में कपड़े पहनने के लिए या समय-समय पर कुछ भोजन करने के लिए, लेकिन वह अलग विषय है।

इस सबको, बहुत ज्यादा झड़पबाजी की संज्ञा दी जा सकती है। तुरन्त मार खाकर चारों खानों चित्त हो जाने की बजाए इस तर्क का सामना किया जा सकता है (चलिए, इसे 'सर्वसत्तात्मक तर्क' नाम दे देते हैं)। सर्वसत्तात्मक तर्क एक बड़ी मान्यता पर आधारित है जो यह है, यदि कोई कार्य अपने परिणामों के प्रभावों के कारण राजनैतिक महत्त्व का है तब इसी आधार पर वह अन्य किसी पर प्राथमिकता प्राप्त कर लेता है। क्योंकि इस मान्यता के बिना उस महत्त्व का वास्तव में अस्तित्व उन झक्की लोगों के लिए रहेगा जो हमेशा इसकी तलाश में रहते हैं लेकिन इससे उस निष्कर्ष को न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता कि नियंत्रण आवश्यक है। यह मानना पड़ेगा कि राजनैतिक महत्त्व को नियंत्रण की इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए किसी अन्य प्रकार के महत्त्व के मुकाबले तरजीह दी जानी चाहिए। उदाहरण के लिए, विशुद्ध व्यावसायिक आधारों पर यह सबसे अच्छा लग सकता है कि न्यू टाउन में कुछ नए संयत्रों पर काम किया जाए लेकिन इससे ओल्ड टाउन में बेरोजगारी की स्थिति के महत्त्व को नजरन्दाज करना होगा जहां स्थितियां वास्तव में अत्यन्त निराशाजनक हैं। राजनैतिक दृष्टि से इसलिए सर्वोपरी निर्णय शायद यह लेना होगा, जो कि काफी न्यायोचित भी होगा, कि ओल्ड टाउन स्थान के चयन के लिए समर्थन या प्रलोभन दिया जाए।

पेशेवर शिक्षाविदों द्वारा पाठ्यचर्या से संबंधित लिए गए अनेक निर्णय इरादतन राजनैतिक रूप से तटस्थ होते हैं लेकिन प्रश्न है कि क्या लिए गए निर्णय अपने प्रभावों में भी तटस्थ हो सकते हैं।... पेशेवर शिक्षाविदों का पाठ्यचर्या से संबंधित कोई भी निर्णय अपने प्रभावों में तटस्थ नहीं हो सकता।

क्या राजनैतिक महत्त्व को हमेशा वर्चस्व प्राप्त होना चाहिए ? एक अन्य उदाहरण लें। एक छात्रा को अपनी शोध के लिए व्यक्तिगत रूप से एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अनुशिक्षण अंतिम मिनट में लेना है क्योंकि उसे किसी दूर के स्थान पर लौटना है जहां वह बिना किसी की सहायता के अपना लिखने का कार्य पूरा करेगी; लेकिन छात्र संघ ने सरकारी नीति के किसी पहलू के खिलाफ प्रदर्शन का आह्वान किया है और प्रदर्शन अनुशिक्षण के लिए निर्धारित अपरिवर्तनशील समय में ही है। एक बहुत भारी भीड़ के आकार में एक अत्यन्त अल्प अंशदान जोड़कर राजनैतिक उद्देश्य को आगे बढ़ाना क्या स्वतः अन्तिम मिनट अनुशिक्षण के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण वैयक्तिक महत्त्व को लांघ कर होना चाहिए। निश्चित रूप से कम से कम नकारात्मक उत्तर के लिए यहां तार्किक स्थान उपलब्ध है ? - लेकिन यदि ऐसा है तब सर्वसत्तात्मक मान्यता की स्थिति क्या है ?

मैंने पहले कहा था कि किसी गतिविधि के बारे में राज्य में या तो राज्य इसे अनुमति देता है या नहीं देता है और इस अर्थ में राज्य इसके बारे में तटस्थ नहीं हो सकता। इस प्रकार औपचारिक और अत्यंत सतही अर्थ में प्रत्येक कार्य का राजनैतिक महत्त्व होता है लेकिन अधिक ठोस अर्थ में ऐसा नहीं भी हो सकता है। क्योंकि राजनैतिक सिद्धांत अपने में यह विचार समाहित कर सकता है कि ऐसे मामलों की कार्यसूची जिसमें सरकारी नियंत्रण वांछनीय होता है, सीमित होनी चाहिए। इसे हम उदार दृष्टि कह सकते हैं, सीधे तौर पर इस अर्थ में कि यह गतिविधि के कुछ खास क्षेत्रों को जानबूझ कर राजनैतिक हस्तक्षेप में मुक्त रखना तय करती है। सामान्यतया इन गतिविधियों का राजनैतिक महत्त्व फिर भी होता है (उनकी अनुमति होती है) लेकिन ठोस रूप में नहीं (वे कार्यसूची में नहीं होती)! गतिविधियां जिन्हें इस तरह बाहर रखा जाता है और जहां तक मैं देख सकता हूं, शिक्षा से संबंधित बहुत सारी होती हैं। निश्चय ही स्कूल बच्चों में शिक्षित होने के पैटर्न उत्पन्न करना जारी रखेंगे और ये पैटर्न जिस प्रकार के समाज का निर्माण हो रहा है उस पर अपना प्रभाव बनाए रखेंगे। यही बात अनौपचारिक शैक्षिक प्रभावों यथा परिवार, कारखाने, दफ्तर, संचार साधनों आदि के बारे में भी सही है। हालांकि राजनैतिक सिद्धांत कभी भी क्रियाशील हो सकता है कि इस प्रकार के प्रभावों और उनके परिणामों को ठोस राजनैतिक नियंत्रण या अवलोकन से बाहर रखा जाए। शैक्षिक संस्थानों में एक परिमाण में स्वायत्तता का अस्तित्व एक अच्छे समाज की दूर-दृष्टि का भाग हो सकता है।

ऐसी संभावना के विभिन्न आधारों की कल्पना की जा सकती है। वे आर्थिक हो सकते हैं जैसे कि तब जब यह सोचा जाता है कि बच्चों की शिक्षा का मसला सरकारी खर्च की बजाय निजी खर्च पर हल हो तो अधिक उचित है। जब कोई राजनैतिक पार्टी शिक्षा पर नियंत्रण की मांग नहीं करती है तब वे बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य कर रहे हो सकते हैं क्योंकि सत्ता को खोने का अर्थ है कि एक निर्मित किया हुआ राजमार्ग राजनैतिक विरोधियों के लिए अनावश्यक नियंत्रण को क्रियान्वित करने के लिए खोल देना। जहां राजनैतिक शिक्षा से खास सरोकार होता है, उसके आधार ज्ञान-मीमांसात्मक होते हैं, जिसमें यह स्वीकार कर लिया जाता है कि ऐसे मुद्दे विवादास्पद हैं और प्रत्येक व्यक्ति अपने बारे में उचित समय पर स्वयं निर्णय ले।

मेरा यहां इस बहस से सरोकार नहीं है कि राज्य का पाठ्यचर्या पर नियंत्रण होना चाहिए अथवा नहीं, लेकिन पूर्व-उत्तरित प्रश्न कि राज्य द्वारा नियंत्रण हो, क्योंकि इससे बचा नहीं जा सकता या क्योंकि पाठ्यचर्या संबंधी केवल तब हो सकता है, प्रश्नों को किसी ठोस राजनैतिक परिप्रेक्ष्य या अन्य के संदर्भ में हल कर सकते हैं- और मैं बताता हूं कि यह तार्किक या अवधारणात्मक जोर-जबरदस्ती अस्तित्व में नहीं है। सरकार को सर्वसत्तात्मक होने की आवश्यकता नहीं है यद्यपि ऐसा निर्णय निश्चय ही अपने-आपमें राजनैतिक है। अतः विकल्प हैं और जिस प्रकार की शब्दावली में राजकीय नियंत्रण की बहस को संचालित किया जाना चाहिए, वह होना चाहिए और नहीं होना चाहिए, वांछनीय और अवांछनीय। हम अर्ध-तार्किकता द्वारा यह स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं हैं।

यदि यह सही है तब मैं अपेक्षा करूंगा कि बहस जारी रहे, इस सोच-विचार की समझ रखते हुए कि पेशेवरों ने अपनी स्वंतत्रता का कैसे वास्तविक उपयोग या दुरुपयोग किया, प्रयोग का स्थान, प्रासंगिक ज्ञान को केन्द्रीकृत किए जाने की संभावना, समन्वयन या उसका अभाव क्योंकि इससे भौगोलिक गतिशीलता पर प्रभाव पड़ता है, अवसर की समानता पर प्रभाव, व्यावसायिक आत्म-गौरव पर प्रभाव, जनता के सामने अधिक जवाबदारी की संभावित जरूरत, विदेशी उदाहरणों से सीखे जाने वाले सबक, पाठ्यचर्या की व्यावसायिक प्रासंगिकता, सामाजिक आवश्यकताओं के प्रति स्कूलों की संवेदनशीलता आदि- आदि। परिणाम होगा इतिहास से संबद्ध निर्णय जो इस पर आधारित होगा कि एक खास गुणवत्ता के पेशेवरों के साथ एक विशिष्ट स्थान और समय पर क्रियाकलाप कैसे विकसित हो रहे थे। ऐसी अधिक विशिष्ट चर्चाओं में सावधानी के लिए सचेत कर देना अनुपयुक्त न होगा : क्या यह मानना बेहद भोलापन नहीं होगा, जो कि कभी-कभी मान लिया जाता है, कि यदि राजकीय नियंत्रण को सुरक्षा में ले लिया जाए तब निश्चय ही एक अपनी दृष्टि होगी जिसे क्रियान्वित किया जाएगा या जो राजनैतिक शक्तियां इस प्रकार पैदा होंगी उन्हें राजनैतिक विचारों की तरह जिन्हें घेर-घार कर दिमाग में डाल दिया गया है, तत्परता से नियंत्रण में रखा जाएगा ? शायद हमें अपने दिमाग में नौसिखिया जादूगर के भाग्य को रखना होगा जब हम राजनीति के साथ कार्यकलाप करेंगे।

स्कूली शिक्षा का एक काम यह भी है कि राजनैतिक चेतना को शांत बनाए रखे। इसके लिए वह प्राचीन इतिहास और प्रकृति का अध्ययन जैसे नुकसान न पहुंचाने वाले विषयों में समय लगाकर असली वर्ग-हितों से ध्यान हटा देती है।

जहां तक पाठ्यचर्या को राजनीति से बाहर रखने का संबंध है, और उसकी संभावना का प्रश्न है, वांछनीयता का न सही, इस मामले को यहीं पर छोड़ देने का मन होता है। एक और क्षुब्ध कर देने वाली तार्किक कड़ी है जिस पर अभी विचार नहीं किया गया है। यह हमारा ध्यान एक मान्यता की तरफ आकर्षित करने से शुरू होती है जिसे मैं लगातार निर्मित कर रहा हूं यानी कि जिस पर विचार किया जाना है वह है शैक्षिक कार्यक्रम पर सरकार का प्रभाव और इसलिए शिक्षित होने के पैटर्न पर प्रभाव जो कि अन्ततः प्रकट होता है। मान लीजिए कि, प्रभाव के उस संभावित स्रोत को सीमित सरकार के सिद्धांत के अनुसार नियंत्रण में रखा जाता है जो कि इस अर्थ में एक उदारवादी दृष्टिकोण होगा जो मैंने इसे दिया है। तब क्या शिक्षा राजनैतिक निर्वात में चलेगी ? तब जो होता है, यह तर्क दिया जा सकता है कि विद्यमान कार्यकलाप का राजनैतिक अभिवृत्तियों के निर्माण को प्रभावित करने में कोई प्रतिरोध नहीं है और इसलिए हमारे पास एक रूढ़िवादी प्रजाति है। कार्यसूची में कुछ मुद्दे नहीं होने का मतलब यह नहीं है कि मुद्दे खत्म हो गए या उन्हें कोई प्रभाव डालने से रोक दिया गया है।

निश्चय ही सच होने पर भी यह अपवादहीन हो सकता है। राजनैतिक पार्टियां अपने फायदे और नुकसान को लेकर एक छोर से दूसरे छोर तक झूलती रह सकती हैं और इस प्रकार के कार्यकलाप की किसी स्थिति को स्वीकार करने का निर्णय ले सकती है। लेकिन ऐसी सौम्य स्वीकृति मार्क्सवादी सिद्धांत से आना, जो वर्ग संघर्ष और वर्ग वर्चस्व के अर्थ में ऐतिहासिक विश्लेषण पर आधारित है, संभाव्य नहीं है। (इन मार्क्सवादी कहे जाने वाले सिद्धांतों के बड़े फलक पर जो अनेक अन्तर विद्यमान हैं उन्हें मैं यहां नजरन्दाज कर रहा हूं) जो एक राजनैतिक पार्टी की कार्यसूची में नहीं है, वह एक अन्य पार्टी की कार्यसूची के केन्द्र में हो सकता है। इस प्रकार के वैकल्पिक सिद्धांत में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष (छिपी हुई) पाठ्यचर्या पूरी मुस्तैदी से स्कूली शिक्षा के आरंभ से लेकर अंत तक काम कर रही होती है जिसमें राजनैतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण अभिवृत्तियों का पोषण होता है। स्कूली शिक्षा को वर्गों के अनुसार विभाजित समाज के अनुसार सत्ता के प्रति उपयुक्त विनयी अभिवृत्ति को बच्चों के मन में बैठाने के माध्यम के रूप में देखा जाता है। अवसर की समानता की गलत अवधारणा के द्वारा धन, हैसियत और शक्ति के असमान वितरण प्रत्यक्ष रूप से जायज ठहराने का काम भी स्कूली शिक्षा को करते देखा जाता है। स्कूली शिक्षा का एक काम यह भी है कि राजनैतिक चेतना को शांत बनाए रखे। इसके लिए वह प्राचीन इतिहास और प्रकृति का अध्ययन जैसे नुकसान न पहुंचाने वाले विषयों में समय लगाकर असली वर्ग-हितों से ध्यान हटा देती है। इस प्रकार जब स्कूल छोड़ने का समय आ जाता है, तब तक समाज की वास्तविक व्यवस्थाएं विवेकपूर्ण और अपरिहार्य लगने लगती हैं और मार्क्सवादी विश्लेषण तब अत्यन्त असंभाव्य लगने लगता है। वास्तविकता के चहुंओर चेतना का सुदृढ़ीकरण करके, चीजें कितनी भिन्न और फर्क वाली हो सकती हैं उनकी काल्पनिक उत्तम छवि को पहले ही हटा दिया गया। स्कूली शिक्षा को ऐसी राजनैतिक महत्त्व की इबारत में देखना जैसी यह है (और अन्य मार्क्सवादी दलीलें इसी शैली में अन्य राजनैतिक सिद्धांतों की भाषा में प्रस्तुत की जा सकती हैं) किसी झक्की द्वारा मात्र औपचारिक और सतही राजनैतिक महत्त्व की खोज में लगे रहना नहीं है बल्कि ध्यान आकर्षित करना है उन हितों से संबंधित वास्तविक ठोस राजनैतिक मुद्दों की ओर जो मुश्किल से अन्य प्रकार के हितों द्वारा कम महत्त्व के साबित हो सकें। वैसे उदारवादियों की कार्यसूची तैयार किसने की हैं ?

इस तार्किक कड़ी से कोई कितना क्षुब्ध होता है और कितना सोच पाता है कि प्रस्ताव क्रियान्वयन के लिए अवश्य आएं, यह निस्संदेह ज्यादातर इस पर निर्भर करेगा कि कोई इसे कितना विश्वसनीय पाता है। कम से कम यह तो दिलचस्प जरूर है। एक चीज जो शायद की जा सकती है हालांकि यह असंभव और बहुत बड़ा काम होगा, इसको अधिक आकर्षक बनाने की बजाय सटीक ढंग से इनमें से प्रत्येक दावे की सत्यता पर विचार करना। क्या शासक वर्ग में परस्पर मेलजोल है जो ज्यादातर लोगों पर अपने शोषणात्मक हितों के लिए शासन करता है। सत्ता के प्रति जिस प्रकार की मनोवृत्तियां हैं और उपलब्धियों में असमानताएं हैं जो कि कथित रूप से स्कूल की देन हैं, क्या वे शासन करने की युक्तियां मात्र हैं ? या क्या वे सभी औद्योगीकृत समाजों में पाई जाती हैं, शायद कुछ हठीले मानवीय स्वभाव के गुणों के कारण और भिन्नता तथा कार्यकुशल उत्पादन की जरूरतों के कारण उत्पन्न होती हैं ? यह आलोचना कि सबके लिए समान अवसर का प्रयास 'अच्छी नौकरियों' के अपरिवर्तनशील अनुपात के द्वारा खण्डित हो जाता है, चाहे शिक्षार्थी कितना भी कठिन परिश्रम करें, तर्क की दृष्टि से सही लगता है फिर भी दूसरी तरफ कम से कम कुछ मात्रा में समाज में वर्ग गतिशीलता है। संक्षेप में, यह कहां तक सच है कि स्कूल कुछ मायनों में वर्ग भेद को प्रतिबिंबित करता है जिसका दबाव त्वरित राजनैतिक महत्त्व का होता है ? मेरा इरादा इस प्रश्न को मात्र शब्दाडम्बरी बनाना नहीं है।

प्रस्ताव के रूप में जिसकी न्यूनतम आवश्यकता है और जिसके बारे में बहुत कम कहने की भी जरूरत है, वह है, स्वयं राजनैतिक शिक्षा पर अधिक ध्यान देना है। स्वायत्तता के मानदण्डों और मानकों के बारे में पहले जो कहा गया है, उसके साथ सामंजस्य बिठाने के लिए ऐसी राजनैतिक शिक्षा को किसी एक राजनैतिक सिद्धांत के प्रति अप्रतिबद्ध होना होगा, कम से कम किसी सांस्थानिक पुनर्सुदृढ़ीकरण तरीके से। क्रिक्स के शब्दों में शायद एक प्रकार की बुनियादी 'राजनैतिक साक्षरता' इसका सरोकार होगा [6]। यह मामला उसी प्रकार दिखेगा जैसे धार्मिक शिक्षा अत्यन्त विवादास्पद मुद्दों और प्रायः असामंजस्यपूर्ण विकल्पों से निबटती है और एक तथाकथित तटस्थ शिक्षक के बारे में पहेलियां बूझती है।

किंतु इस प्रकार के प्रस्तावों के निहितार्थों पर काम करना एक अलग काम होगा जो सही भी है। इस परचे में मेरा अभिप्राय सिर्फ तथाकथित तार्किक या अवधारणात्मक आवश्यकताओं के अस्तित्व को नकारना रहा है जो राजकीय नियंत्रण की आकस्मिक वांछनीयता के बारे में सभी चर्चाओं को पहले ही प्रभावी तौर पर स्थानान्तरित कर देती हैं। इस प्रकार की जरूरतें हैं ही नहीं। राजकीय नियंत्रण की प्रकृति और सीमा का चयन करने के लिए हम स्वतंत्र हैं जो उन परिस्थितियों के आधार पर होगा जो किसी विशिष्ट ऐतिहासिक काल में सर्वोत्तम लगेंगी।

पुनश्च :

उस समय जब यह आलेख लिखा जा रहा था, यह प्रश्न उठाया जा रहा था कि सोवियत ओलम्पिक खेलों में एथलीट की भागीदारी हो

अथवा नहीं। बहुत सारे तर्क जो मैंने शिक्षा में रखे, पूर्ण रूप से समानान्तर तरीके से खेलों के लिए निर्मित किए जा सकते थे और इससे हमें यह तय करने में मदद मिल सकती है कि क्या वे तर्क न्यायसंगत थे यदि हम समानान्तर उदाहरणों को लें।

खेलों के बारे में अधिकतर बहस, शिक्षा की तरह ही, गलत निर्देशित होने के कारण खेलों की तथाकथित राजनैतिक तटस्थता से बद्ध है, एक मुख्य बिन्दु यहां स्वयं खिलाड़ियों के अराजनैतिक इरादों से वास्ता रखता है। तथापि, चाहे खिलाड़ी भाग लें या न लें और उनके इरादों पर ध्यान न देने के बावजूद, उनके कार्यों के प्रभाव के कारण उनका राजनैतिक महत्त्व है। खेल राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के विभिन्न प्रतिरूपों के वाहक होते हैं; सुस्पष्ट अनुपस्थिति उनके अपने लोगों के बीच सोवियत सरकार की प्रतिष्ठा को प्रभावित कर सकती थी, भागीदारी एक अधिकांश रूप से बंद समाज को व्यापक जन-समाज के लिए खोल सकती थी। सोवियत भिन्न मतावलम्बी प्रोत्साहित होते या हतोत्साहित होते आदि- आदि। दीर्घावधि में सोवियत सैनिक गतिविधि में वृद्धि की संभावना पर प्रभाव पड़ सकता है या राज्यों द्वारा खेलों को राजनैतिक औजार के रूप में प्रयोग करने की तैयारी पर प्रभाव पड़ सकता है। एक बार फिर, जैसा शिक्षा के साथ होता है, राज्य खेलों में अत्यधिक रुचि लेते देखे जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, नागरिकों की स्वतंत्रता को नियंत्रित करने में जैसे कि कौन से खेलों की अनुमति दी जाएगी (ग्लैडियेटरों की भिड़न्त नहीं, और शायद जानवरों का शिकार और उन्हें लालायित करने वाले निश्चित प्रकार के खेल भी नहीं), और खेल की गतिविधियों के लिए ठोस आधार उपलब्ध कराने में (स्टेडियम, खेल परिसर, प्रशिक्षण सुविधाएं)। यहां तक कि जिस तरीके से खेल खिलाए जाते हैं, वह भी प्रभावित हो सकता है जैसे कि चीनी सिद्धांत के साथ 'दोस्ती पहले, प्रतिस्पर्धा बाद में'।

फिर भी, खेल के कुछ पहलू हैं जिन्हें स्वायत्त माना जा सकता है, उसी तरह जैसे वैज्ञानिक या सौन्दर्यपरक शिक्षा के कुछ पहलुओं को स्वायत्त कहा जा सकता है। उदाहरण के लिए, प्रतिस्पर्धा में विभिन्न प्रकार की न्यायसंगति के लिए जगह होती है, जिमनास्टिक्स के बारे में निर्णय लेने में करने के सलीके का मूल्य, गोताखोरी या स्केटिंग, किसी खेल में निपुणता निर्धारित करने वाले विशिष्ट मूल्य। यदि गोताखोरी के जजों द्वारा गोता लगाने वाले की राष्ट्रीयता को ध्यान में रखा जाता है तब इस खेल का परिणाम ऐसा होगा जो जीव विज्ञान के सिद्धांत को गढ़ने में राजनैतिक जरूरतों को प्राथमिकता देगा जैसा कि लिसेन्कों के साथ है। स्वायत्तता को इतनी मात्रा में मान्यता देना फिर भी खेल गतिविधि के अनेक पहलुओं पर विस्तृत राजनैतिक नियंत्रण बिल्कुल तादात्म्यपूर्ण होगा।

जैसा शिक्षा के साथ है, वैसा ही खेल के साथ, परिणाम वही है। राज्य अनेक प्रकार के नियंत्रण क्रियान्वित कर सकता है लेकिन तार्किक दृष्टि से यह एक खुला सवाल है, क्या उसे ऐसा करना चाहिए। खेल का राजनैतिक महत्त्व है, इस तथ्य मात्र से निर्णय स्थानान्तरित नहीं हो जाता है। यदि अफगानिस्तान जाने में यह नहीं था, मास्को जाने में ज्यादा राजनैतिक महत्त्व था लेकिन अनुमानतः प्रत्येक राज्य जिसने ओलम्पिक कमेटी को उस स्थान को चुनने की सहमति दी थी, उसका अन्तर्निहित विचार था कि राजनैतिक महत्त्व की अवहेलना करना नहीं था। यदि रूस ने उसी समय जब अफगानिस्तान में सेना भेजी थी, यूगोस्लाविया, ईरान, पाकिस्तान, फिनलैण्ड और टर्की में भी सेना भेजी होती, तब ऐसा अनुमान है बहुत कम (यद्यपि जरूर कुछ ने) राज्यों ने अपने एथलीट को मास्को भेजने का समर्थन किया होता। परिस्थितियां मुद्दों में परिवर्तन ला देती है और बात यह है कि हम ऐसी स्थिति का सामना नहीं कर रहे हैं कि हमें तार्किक अनिवार्यता के सामने झुकना पड़े बल्कि हमें ठोस चुनाव करने के लिए कहा जा रहा है; और वह तार्किक रूप से खुला चुनाव क्या होना चाहिए, अनेकानेक आकस्मिक कारणों पर निर्भर करेगा। ◆

भाषान्तर : सुरेन्द्र कुशवाह

आभार

इस परचे पर अपनी टिप्पणी देने के लिए मैं अपने साथियों क्लाइन हारबर, इएयुवान लॉयड और रोलेण्ड मेधन का कृतज्ञ हूं।

संदर्भ

1. NORMAN, R. (1975) The neutral teacher? in: BROWN, S.C. (Ed.) Philosophers Discuss Education, p. 187 London, Macmillan).
2. WHITE, J.P. (1976) Teacher accountability, Proceedings of the Philosophy of Education Society, 10, p. 64.
3. परिभाषा के बारे में इन बिन्दुओं के दिलचस्प खुलासे के लिए, देखें BEST, D. (1978) Philosophy and Human Movement, pp. 88-90 (London, Unwin).
4. उदाहरण के लिए, देखें WILSON, J. (1979) Preface to Philosophy of Education (London, Routledge & Kegan Paul).
5. इस बिन्दु के लिए अत्यन्त रोचक समर्थन के लिए देखें ORGON, P. & WHITE, J. (1979) Philosophy as Educational Reformers (London, Routledge & Kegan Paul).
6. CRICK, B. & PORTER, A. (Eds) (1978) Political Education and Political Literacy (London, Longmans).